'करवा का व्रत' और नारी अस्मिता

डॉ. मीनू कुमारी*

आधुनिक कहानीकार यशपाल की कहानी 'करवा का व्रत' पारिवारिक जीवन से जुड़ी एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। लाजो और कन्हैयालाल के दांपत्य जीवन की यह कहानी भारतीय समाज में स्त्री और पुरुष की मनोवृतिओं पर प्रकाश डालती है। विवाह के पहले दिन कन्हैया लाल का मित्र हेमराज उसे ऐसा पाठ पढ़ाता है कि वह चाहकर भी अपनी पत्नी लाजो को प्रेम नहीं कर पाता। कन्हैयालाल के इस रूखे व्यवहार से लाजो के सारे सपने बिखर जाते हैं। वह पढ़ी-लिखी भी है, नाज नखरे वाली भी और मानिनी भी। किंतु छोटी-छोटी बातों पर पति से मिलने वाली डाँट फटकार के सामने सारे नाज नखरे धरे रह गए। दिन प्रतिदिन कन्हैयालाल का व्यवहार लाजो के प्रति क्रूर होता चला गया। लाजो की हर बात को काटना, उसे नीचा दिखाना, कन्हैया का व्यवहार बन चुका था। अब तो कन्हैया ने लाजो को पीटना भी शुरू कर दिया। एक पुरुषवादी सोच उस पर हावी होती जा रही थी। जब से उसने लाजो को पीटना शुरू किया वह अपने आप को और अधिक शक्तिशाली महसूस कर रहा था। लाजो ने इस डाँट डपट और पिटाई को अपनी नियति मानकर जीवन की कटुता को स्वीकार कर लिया था। मार खाकर फर्श पर पड़ी हुई अपने आप को ही कोसती रहती, आँसू पोंछ कर खड़ी होती और फिर से चूल्हे चौके में लग जाती।

अक्टूबर का महीना शुरू हो चुका था। त्योहारों की तो जैसे झड़ी लग गई। 'करवे के व्रत' से एक दिन पहले सब स्त्रियाँ सरगी के बारे में बातें कर रही थीं। उन्होंने फेनी और खोए की मिठाई मँगवाने की सोची। लाजो भी मचल उठी। उसने भी पति के सामने बड़े विनम्र भाव से सरगी की माँग रख दी। कन्हैया ने इसकी जरा भी परवाह ना की और खाली हाथ घर लौट आया। लाजो का मन बुझ गया। लाजो ने दुखी मन से कुछ कहा तो कन्हैया ने आव देखा न ताव उसे पीट दिया। बेचारी फर्श पर पड़ी रोती रही। भूखी प्यासी ही सो गई। अगले दिन मन में कोई चाव ना था, फिर भी उपवास किया। एकाएक उसके मन में एक विचार आया। यदि व्रत किया तो हर जन्म में यही पति मिलेगा और ऐसे ही मार खानी पड़ेगी। उसने रसोई से दो बासी रोटी लेकर खा ली और व्रत भंग कर दिया।

रात को पति ने आते ही फिर से खरी-खोटी सुनानी शुरू कर दी ''अभी तक पारा नहीं उतरा लगता है झाड़े बिना नहीं उतरेगा'' लाजो ने कोई उत्तर न दिया। ''अच्छा यह अकड़ है आज तुझे ठीक कर ही दूँ'' उसने लाजो को बाँह से पकड़ कर दो थप्पड़ खींच कर जड़ दिए। लाजो का क्रोध भी सीमा पार कर चुका था। चीखकर बोली - ''मार ले! मार ले! जान से मार डाल! पीछा छूटे! आज ही तो मारेगा। मैंने कौन व्रत रखा है तेरे लिए, जो जन्म जन्म मार खाऊँगी! मार! मार डाल!''

कन्हैया ने मारने के लिए जो लात उठाई थी ज्यों की त्यों रुक गई। हिंदू धर्म में विवाहिता स्त्री का करवा का व्रत न करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। कन्हैया अवाक् रह गया। वह अंधेरे में कुत्ता समझकर जिस जानवर को मारता आ रहा था, वह तो शेरनी निकली। उसे कुछ न सूझा और बाहर निकल गया। घंटे भर बाद लाजो फर्श से उठी और बेमन से खाना बनाया। कन्हैया इसके भी बहुत बाद में लौटा आकर चुपचाप खाना खा लिया। हाथ धोने के लिए भी लाजो को नहीं बोला। खुद ही नल पर धो लिए। लाजो ने बाद में खाना खाया तो पता चला कद्दू की तरकारी बिल्कुल कड़वी बनी थी। नमक दो बार पड़ गया था। पर कन्हैया ने कुछ भी नहीं कहा। चुपचाप सोने चला गया। बिस्तर भी स्वयं ही झाड़ने लगा। लाजो ने शर्मा कर कहा... मैं किये देती हूँ।'' तो कन्हैया

* सहायक प्रोफैसर
मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

दूसरी ओर से उसकी मदद करने लगा और कहा- ''तुमने कुछ खाया नहीं। कद्दू में नमक ज्यादा हो गया है। सुबह और पिछली रात भी तुमने कुछ नहीं खाया था। ठहरो, मैं तुम्हारे लिए दूध ले आता हूँ।'' लाजो के प्रति इतनी चिंता उसने कभी नहीं दिखाई थी। जरूरत भी नहीं समझी थी। लाजो को उसने 'चीज' समझ रखा था। आज वह ऐसे बात कर रहा था जैसे लाजो भी इंसान हो। उसका भी ख्याल किया जाना चाहिए।

उन लोगों का जीवन दूसरी तरह का हो गया था। कन्हैयालाल को लाजो के मन में दबे आक्रोश का पता चल चुका था। जो करवे का व्रत न करने का निर्णय ले सकती है, वह कुछ भी कर सकती है। अब कन्हैया जो भी पुस्तक या पत्रिका पढ़ता लाजो को भी सुनाता था। वह लाजो का पूरा ख्याल रखता। कभी-कभार कुछ खाने की चीजें भी ले आता। घर के काम में भी कन्हैया लाजो का पूरा हाथ बटाँता था। अब पहले की तरह डाँट डपट उसे नहीं सूझती थी। लाजो के जीवन की तो मानो काया ही पलट हो गई थी। अगले वर्ष करवे का व्रत फिर आया। कन्हैया लाजो के लिए फेनी ले आया। यही नहीं, करवे का व्रत कन्हैया ने भी किया। और कहा- ''तुम्हें अगले जन्म में मेरी जरूरत है तो क्या मुझे तुम्हारी नहीं है।''

इस सामान्य सी घटना को यशपाल ने प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है। 'करवे का व्रत' न करना अपने आप में एक विद्रोह है जिसे पुरुष समाज कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता। लाजो के इस विद्रोह से कन्हैया को भी अनुमान हो जाता है कि अब उसकी मनमानी नहीं चलेगी। उसी दिन से उसके व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। प्रस्तुत कहानी पुरुष समाज के समक्ष एक प्रश्न खड़ा करती है कि स्त्री को केवल एक जाति (औरत जात) या वस्तु न समझा जाए। उसकी भी एक अस्मिता है, उसका अपना विचार है, उसकी भी जरूरतें हैं, ख्वाहिशें हैं। एक स्त्री परिवार के सभी सदस्यों की सभी जरूरतों व इच्छाओं का ध्यान रख सकती है, तो उसके प्रति सब बेपरवाह कैसे हो सकते हैं।

भारतीय परंपरा के कुछ जड़ तत्त्वों की ओर भी यह कहानी संकेत करती है। एक पुरुष को स्त्री पर हाथ उठाने का अधिकार किसने दिया? स्वयं पुरुष समाज ने। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि इस पुरुष सत्तात्मक समाज में नारी को अपना स्थान बनाना है, तो उसे विद्रोह करना ही होगा और इस प्रकार के विद्रोह को नारी समाज का पूर्ण समर्थन मिलना चाहिए। कहानी में एक स्थान पर हेमराज का कथन है- ''तुम कहते हो पढ़ी लिखी है तो तुम्हें और भी चौकस रहना चाहिए। पढ़ी-लिखी यो भी मिजाज दिखाती है।'' जिस समाज में एक स्त्री के प्रति इस प्रकार की सोच हो वहाँ उसके लिए चुनौतियाँ और अधिक बढ़ जाती हैं। लाजो जैसी स्त्रियाँ हमें यहाँ हर घर में देखने को मिल जाती हैं,जो अपनी पढ़ाई ससुराल जाने के बाद पूरी नहीं कर पाती। जिसे बार-बार उसके अक्षम होने का एहसास दिलाया जाता है और सबसे बड़ा एहसास यह है कि तुम स्त्री हो। यह कहकर घर की सारी जिम्मेदारी उस पर डाल दी जाती है। जब कन्हैयालाल काम में लाजो का हाथ बँटाता है तो लाजो को यह अजीब लगता है, क्योंकि वह उस साँचे में ढल चुकी है कि घर का हर कार्य स्वयं करें। कहानी के अंत में कन्हैया लाल का 'करवा का व्रत' करने के लिए तत्पर होना एक युग के बदलने का संकेत है। एक स्त्री का भी उतना ही महत्त्व है जितना एक पुरुष का। नारी अस्मिता की दृष्टि से 'करवा का व्रत' एक सशक्त कहानी है। जिसमें बिल्कुल सहज और सुबोध भाषा में कहानीकार ने एक स्त्री की पीड़ा को व्यक्त किया है। कहानी में संवाद कम किंतु सटीक हैं। कहानी के सभी तत्त्व कहानी के उद्देश्य को पूरा करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। कहानी का आंतरिक प्रभाव बहुत अधिक है। शीर्षक भी बहुत सार्थक है। जिस समस्या को कहानीकार ने उठाया है उसकी शुरुआत भी 'करवे के व्रत' से होती है और उसका समाधान भी 'करवे के व्रत' पर ही होता है।

❑❑❑❑